

नीतिशतक में वर्णित श्लोकों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रीति बाला श्रीवास्तव, शोधार्थी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर Email: priti24071982@gmail.com

डॉ. रश्मि गुप्ता, शोध निर्देशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर

सारांश

संस्कृत साहित्य की नीति-परंपरा भारतीय बौद्धिक परंपरा का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। इस परंपरा में भर्तृहरि का नीतिशतक विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि इसमें व्यक्ति के आचरण, विद्या, चरित्र, धन, सत्ता, मित्रता, सामाजिक संबंध, परोपकार, आत्मसम्मान, परिश्रम, न्याय, सद्गुण तथा मानवीय दुर्बलताओं का अत्यंत संक्षिप्त किन्तु प्रभावशाली चित्रण मिलता है। नीतिशतक को केवल उपदेशात्मक काव्य के रूप में देखना उसके सामाजिक और सांस्कृतिक अर्थ-क्षेत्र को सीमित कर देना होगा। वास्तव में यह ग्रंथ तत्कालीन समाज की मूल्य-व्यवस्था, सामाजिक पदानुक्रम, आर्थिक चेतना, राजनीतिक व्यवहार, पारिवारिक संबंधों, नैतिक आदर्शों तथा सांस्कृतिक मान्यताओं को समझने के लिए महत्वपूर्ण साहित्यिक स्रोत प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य नीतिशतक में निहित श्लोकों का सामाजिक तथा सांस्कृतिक आधार पर विश्लेषण करना है। अध्ययन में पाठालोचनात्मक, व्याख्यात्मक, समाजशास्त्रीय तथा सांस्कृतिक अध्ययन की अंतःविषय पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। विशेष रूप से विद्या और सामाजिक प्रतिष्ठा, धन और सामाजिक मूल्य, जाति एवं गुण, राजधर्म, मित्रता, परिवार, स्त्री-पुरुष संबंध, लोकमंगल, परोपकार, आत्मसम्मान, श्रमशीलता और कर्मवाद को विश्लेषण का केंद्र बनाया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि नीतिशतक में एक ओर ऐसी मूल्य-दृष्टि दिखाई देती है जो जन्म, बाह्य वैभव और संपत्ति की अपेक्षा गुण, विद्या, चरित्र और कर्म को महत्त्व देती है; दूसरी ओर कुछ श्लोक तत्कालीन पितृसत्तात्मक तथा धन-आधारित सामाजिक संरचना की सीमाओं को भी प्रतिबिंबित करते हैं। इस द्वंद्वता के कारण नीतिशतक को न तो पूर्णतः आदर्शवादी नीति-साहित्य और न ही केवल प्राचीन सामाजिक दस्तावेज माना जा सकता है; यह अपने समय के समाज का आलोचनात्मक और मूल्यपरक साहित्यिक प्रतिबिंब है।

बीज शब्द : भर्तृहरि, नीतिशतक, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्य, विद्या, धन, राजधर्म, परोपकार, नैतिकता, भारतीय संस्कृति।

1. प्रस्तावना

भारतीय साहित्य में नीति का आशय केवल शासन संबंधी नियमों से नहीं है। नीति का व्यापक अर्थ जीवन को उचित दिशा प्रदान करने वाली वह मूल्य-व्यवस्था है, जिसके अंतर्गत व्यक्ति के निजी आचरण से लेकर पारिवारिक संबंध, सामाजिक व्यवहार, राजनीतिक उत्तरदायित्व और लोककल्याण तक समाहित हो जाते हैं। संस्कृत साहित्य में पञ्चतंत्र, हितोपदेश, विदुरनीति, चाणक्यनीति और नीतिशतक इसी व्यापक परंपरा के प्रमुख ग्रंथ हैं।

भर्तृहरि का नीतिशतक अपने स्वरूप में सुभाषित-प्रधान कृति है। उपलब्ध पाठ में आरंभिक श्लोकों से लेकर अंतिम श्लोकों तक जीवन के विविध क्षेत्रों से संबंधित दृष्टांत और नैतिक प्रतिपादन दिखाई देते हैं। संस्कृत साहित्य के डिजिटल पाठ-स्रोतों में नीतिशतक को भर्तृहरिकृत कृति के रूप में प्रस्तुत किया गया है और इसमें विद्या, सत्संगति, धन, राजधर्म, मित्रता, आत्मसम्मान, परोपकार, कर्म तथा सामाजिक आचरण से संबंधित अनेक श्लोक उपलब्ध हैं।

नीतिशतक के संबंध में लेखकत्व और काल-निर्धारण का प्रश्न पूर्णतः निर्विवाद नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के विद्वान के. टी. तेलंग ने इसके लेखकत्व और काल के संबंध में विशिष्ट तर्क प्रस्तुत किए थे; बाद की संपादित एवं व्याख्यायुक्त परंपराओं में भी भर्तृहरि के नाम से ही यह कृति व्यापक रूप से प्रतिष्ठित है। [BnF Catalogue](#) इसलिए वर्तमान अध्ययन का केंद्र लेखक के जीवन-वृत्त से अधिक स्वयं नीतिशतक का पाठ और उसमें निर्मित सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि है।

मोरेश्वर रामचंद्र काले की संपादित एवं व्याख्यायुक्त परंपरा नीतिशतक को दैनिक जीवन को निर्देशित करने वाली नीति-संहिता के रूप में रेखांकित करती है और आत्मसम्मान, स्वतंत्रता तथा दृढ़ता को इसके प्रमुख नैतिक आदर्शों में रखती है। [Sanskrit Library](#) यही कारण है कि नीतिशतक का सामाजिक अध्ययन केवल श्लोकों के अर्थ-व्याख्यान तक सीमित नहीं रह सकता। आवश्यक है कि यह पूछा जाए कि श्लोक किस प्रकार सामाजिक संबंधों की रचना करते हैं, किस प्रकार व्यक्ति और समाज के बीच संबंध निर्धारित करते हैं, धन और प्रतिष्ठा को किस दृष्टि से देखते हैं, राजा और प्रजा का आदर्श संबंध क्या मानते हैं तथा कौन-से सांस्कृतिक मूल्य आदर्श जीवन की आधारशिला के रूप में स्थापित किए जाते हैं।

2. अध्ययन की समस्या

प्रस्तुत शोध की मूल समस्या यह है कि नीतिशतक में वर्णित नीति-उपदेशों के पीछे कौन-सी सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना कार्य कर रही है। क्या यह कृति केवल व्यक्तिगत नैतिकता की शिक्षा देती है अथवा इसके भीतर व्यापक सामाजिक चिंतन भी निहित

है? क्या इसमें जन्माधारित प्रतिष्ठा की स्वीकृति है अथवा गुणाधारित सामाजिक दृष्टि? धन को सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार मानने और धन के प्रति वैराग्यपूर्ण दृष्टि अपनाने के बीच जो अंतर्विरोध दिखाई देता है, उसका सामाजिक अर्थ क्या है? राजधर्म, मित्रता, परिवार, स्त्री-पुरुष संबंध तथा लोकमंगल की अवधारणाएँ अपने समय के समाज की किन विशेषताओं को प्रतिबिंबित करती हैं? इन्हीं प्रश्नों को केंद्र में रखकर यह अध्ययन नीतिशतक का विश्लेषण करता है।

3. अध्ययन के उद्देश्य

1. नीतिशतक में निहित सामाजिक मूल्यों का विश्लेषण करना।
2. नीतिशतक में अभिव्यक्त सांस्कृतिक जीवन-दृष्टि और नैतिक मूल्यों की पहचान करना।
3. विद्या, धन, गुण, जाति तथा सामाजिक प्रतिष्ठा के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करना।
4. राजधर्म, प्रजापालन तथा शासन संबंधी विचारों का विश्लेषण करना।
5. परिवार, मित्रता और सामाजिक संबंधों की अवधारणा का परीक्षण करना।
6. स्त्री-पुरुष संबंधों तथा तत्कालीन सामाजिक मान्यताओं की आलोचनात्मक समीक्षा करना।
7. परोपकार, लोकमंगल, आत्मसम्मान और कर्मशीलता जैसे मूल्यों की समकालीन प्रासंगिकता स्पष्ट करना।
8. नीतिशतक की सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि में निहित अंतर्विरोधों और सीमाओं को रेखांकित करना।

4. शोध-पद्धति

इस अध्ययन का स्वरूप मूलतः गुणात्मक और व्याख्यात्मक है। इसके लिए निम्न पद्धतियों का संयुक्त प्रयोग किया गया है—

4.1 पाठालोचनात्मक पद्धति

नीतिशतक के उपलब्ध संस्कृत पाठ को मूल आधार बनाकर प्रमुख श्लोकों का चयन किया गया है। उपलब्ध डिजिटल संस्कृत पाठ में संबंधित श्लोकों का क्रम स्पष्ट रूप से दिया गया है।

4.2 समाजशास्त्रीय पद्धति

श्लोकों को सामाजिक संस्था, वर्ग, सत्ता, धन, परिवार, प्रतिष्ठा और सामाजिक संबंधों के संदर्भ में पढ़ा गया है।

4.3 सांस्कृतिक विश्लेषण

धर्म, विद्या, शील, परोपकार, गुरु-श्रद्धा, लोकापवाद, सेवा, दान और सदाचार जैसे सांस्कृतिक मूल्यों का विश्लेषण किया गया है।

4.4 ऐतिहासिक-संदर्भात्मक पद्धति

श्लोकों को उनके ऐतिहासिक-सामाजिक संदर्भ में पढ़ा गया है, न कि आधुनिक मानकों को सीधे उन पर आरोपित किया गया है।

4.5 आलोचनात्मक पद्धति

जहाँ ग्रंथ आधुनिक समानता, स्त्री-दृष्टि अथवा सामाजिक न्याय की दृष्टि से सीमित दिखाई देता है, वहाँ उसका आलोचनात्मक विवेचन किया गया है।

5. नीतिशतक में समाज की अवधारणा

नीतिशतक के सामाजिक चिंतन का मूल केंद्र व्यक्ति है, लेकिन यह व्यक्ति समाज से पृथक् नहीं है। वह पुत्र है, मित्र है, पति है, शिष्य है, सेवक है, विद्वान है, नागरिक है और आवश्यकता पड़ने पर शासक या प्रशासक भी हो सकता है। इसलिए नीति का वास्तविक क्षेत्र सामाजिक आचरण है।

श्लोक—

सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम्।

भर्तृहरि सत्संगति को व्यक्ति के बौद्धिक और नैतिक विकास का प्रमुख साधन मानते हैं। संबंधित श्लोक में कहा गया है कि सत्संगति बुद्धि की जड़ता को दूर करती है, वाणी में सत्य का संचार करती है, मान-सम्मान बढ़ाती है, पाप से दूर करती है और कीर्ति का विस्तार करती है।

यहाँ समाज व्यक्ति के निर्माण का सक्रिय माध्यम बन जाता है। इस दृष्टि से नीतिशतक का समाज केवल व्यक्तियों का समूह नहीं, बल्कि व्यवहार और मूल्य निर्माण की संस्था है।

6. विद्या और सामाजिक प्रतिष्ठा

नीतिशतक में विद्या का स्थान अत्यंत ऊँचा है। भर्तृहरि के अनुसार—

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनम्।

विद्या भोगकरी यशस्सुखकरी विद्या गुरुणां गुरुः॥

आगे कहा गया है—

विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता।

विद्या राजसु पूजिता न तु धनं विद्याविहीनः पशुः॥

यह श्लोक भारतीय ज्ञान-संस्कृति के उस आदर्श को व्यक्त करता है जिसमें वास्तविक प्रतिष्ठा बाह्य आभूषणों से नहीं, बल्कि ज्ञान से निर्मित होती है। यहाँ विद्या को व्यक्ति का वास्तविक सौंदर्य, गुप्त धन, मित्र, देवता तथा सामाजिक प्रतिष्ठा का साधन बताया गया है। इस दृष्टि से नीतिशतक में ज्ञान को सांस्कृतिक पूँजी का दर्जा प्राप्त है। व्यक्ति का सामाजिक मूल्य उसके ज्ञान और व्यवहार से तय होना चाहिए—यह आधुनिक शिक्षा-दर्शन के लिए भी महत्वपूर्ण विचार है।

इसी बात को एक अन्य श्लोक में अधिक व्यापक रूप से प्रस्तुत किया गया है—

केयूराणि न भूषयन्ति पुरुषं ...

वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते।

अर्थात् बाहरी आभूषणों की अपेक्षा संस्कारित वाणी और ज्ञान व्यक्ति का वास्तविक अलंकरण हैं।

यहाँ संस्कृति का अर्थ मात्र परंपरा नहीं बल्कि भाषा, वाणी, शिष्टता और ज्ञान से निर्मित व्यक्तित्व है।

7. जाति, गुण और सामाजिक प्रतिष्ठा का अंतर्विरोध

नीतिशतक के सामाजिक अध्ययन का अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें सामाजिक प्रतिष्ठा के दो परस्पर विरोधी आधार दिखाई देते हैं।

एक ओर भर्तृहरि कहते हैं—

जातिर्यातु रसातलं गुणगणैस्तत्राप्यधो गम्यतां ...

येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः॥

इस श्लोक की मूल संवेदना यह है कि जाति, कुल या बाह्य प्रतिष्ठा की तुलना में गुणों का महत्त्व अधिक है। यहाँ चरित्र, शौर्य और गुण को सामाजिक मूल्य के निर्णायक तत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।

लेकिन दूसरी ओर एक अन्य श्लोक में कहा गया है—

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः

स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः।

स एव वक्ता स च दर्शनीयः

सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति॥

यहाँ धन को सामाजिक प्रतिष्ठा का निर्णायक आधार बताया गया है। धनवान व्यक्ति को कुलीन, पंडित, विद्वान तथा गुणी मान लिए जाने की सामाजिक प्रवृत्ति की ओर संकेत मिलता है।

इन्हीं दोनों श्लोकों को साथ पढ़ना आवश्यक है। इससे पता चलता है कि नीतिशतक केवल आदर्श समाज की कल्पना नहीं करता, बल्कि वास्तविक समाज की विसंगतियों को भी पहचानता है। एक स्तर पर गुण को जन्म और कुल से ऊपर रखा गया है, जबकि दूसरे स्तर पर धन के सामाजिक प्रभाव को स्वीकार किया गया है।

इस प्रकार नीतिशतक के भीतर गुणाधारित आदर्श और धनाधारित सामाजिक यथार्थ का द्वंद्व दिखाई देता है। यही द्वंद्व इस कृति को सामाजिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण बनाता है।

8. धन और आर्थिक नैतिकता

नीतिशतक में धन को न तो पूर्णतः त्याज्य माना गया है और न ही जीवन का अंतिम लक्ष्य। धन के सामाजिक उपयोग पर विशेष बल दिया गया है—

दानं भोगो नाशस्तिष्ठो गतयो भवन्ति वित्तस्य।

यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति॥

धन की तीन संभावित दिशाएँ—दान, भोग और नाश—बताकर भर्तृहरि धन के सामाजिक पुनर्वितरण को महत्त्व देते हैं। यदि व्यक्ति धन का न स्वयं उपयोग करता है और न उसका दान करता है, तो अंततः उसका नाश हो जाता है।

यह दृष्टि आर्थिक नैतिकता का संकेत देती है। धन का मूल्य संचय में नहीं, बल्कि उसके सार्थक उपयोग में है।

इसी क्रम में शासक से कहा गया है—

राजन् दुधुक्षसि यदि क्षितिधेनुमेतां

तेनाद्य वत्समिव लोकममुं पुषाण।

तस्मिंश्च सम्यगनिशं परिपोष्यमाणे

नानाफलैः फलति कल्पलतेव भूमिः॥

यहाँ पृथ्वी को गाय और जनता को बछड़े के रूपक में देखा गया है। राजा यदि जनता का संरक्षण और पोषण करेगा तो राज्य समृद्ध होगा।

यह विचार आधुनिक लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा से प्रत्यक्ष रूप से समान नहीं है, लेकिन उसके भीतर एक स्पष्ट सिद्धांत अवश्य मिलता है—**राजसत्ता की सार्थकता प्रजा-कल्याण में है।**

9. राजधर्म और शासन संबंधी दृष्टि

नीतिशतक में राजसत्ता के प्रति दृष्टिकोण अत्यंत यथार्थवादी है। राजा केवल शक्ति का प्रतीक नहीं, बल्कि सामाजिक व्यवस्था का नियामक है।

श्लोक 47 में राज-नीति के विभिन्न रूपों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि शासन नीति परिस्थिति के अनुसार कठोर, कोमल, हिंसक, दयालु, अर्थप्रधान अथवा दानशील हो सकती है।

यह राजनीतिक व्यवहार की जटिलता को स्वीकार करता है। शासन में केवल आदर्शवाद पर्याप्त नहीं होता; परिस्थितिजन्य निर्णय भी आवश्यक है।

इसके विपरीत, श्लोक 42 में बताया गया है कि दुरनीति से राजा का विनाश होता है—

दौर्मन्यान्पतिर्विनश्यति...

समृद्धिरनयात्...

अर्थात् शासन में गलत सलाह, नीति का अभाव और अनुचित निर्णय व्यक्ति तथा संस्था दोनों को विनष्ट कर सकते हैं।

यह विचार प्रशासनिक नैतिकता के अध्ययन के लिए विशेष रूप से उपयोगी है।

10. परिवार और सामाजिक संबंध

नीतिशतक में परिवार सामाजिक स्थिरता की महत्वपूर्ण इकाई है। एक श्लोक में आदर्श पुत्र, पत्नी और मित्र के लक्षण बताए गए हैं—

प्रीणाति यः सुचरितः पितरं स पुत्रो

यद्धर्तुरेव हितमिच्छति तत् कलत्रम्।

तन्मित्रमापदि सुखे च समक्रियं यद्

एतत् त्रयं जगति पुण्यकृतो लभन्ते॥

यहाँ पुत्र का आदर्श पिता को प्रसन्न करने वाला, पत्नी का आदर्श पति के हित की इच्छा रखने वाला और मित्र का आदर्श सुख-दुःख में समान व्यवहार करने वाला बताया गया है।

इन आदर्शों में परिवार और मित्रता के प्रति उत्तरदायित्व प्रमुख है, किन्तु स्त्री की भूमिका का वर्णन पारंपरिक पारिवारिक अपेक्षाओं के भीतर सीमित दिखाई देता है। इसीलिए आधुनिक लैंगिक समानता की दृष्टि से इस श्लोक का आलोचनात्मक पुनर्पाठ आवश्यक है।

11. स्त्री-पुरुष संबंधों की सांस्कृतिक दृष्टि

नीतिशतक में स्त्री संबंधी विचार एकैखिक नहीं हैं। एक ओर स्त्री को परिवार और दांपत्य जीवन की महत्वपूर्ण इकाई के रूप में देखा गया है; दूसरी ओर कुछ श्लोकों में स्त्री-सौंदर्य, कामना और यौन-संयम के संदर्भ मिलते हैं।

श्लोक 26 में—

युवतिजनकथामूकभावः परेषाम्।

के माध्यम से दूसरे की स्त्री के संबंध में अनुचित चर्चा से दूरी रखने का संकेत मिलता है।

इसी प्रकार—

परधने परयोषिति च स्पृहा।

को दुर्जन के लक्षणों में शामिल किया गया है।

इन श्लोकों का सकारात्मक पक्ष यह है कि वे यौन संयम, मर्यादा और सामाजिक नैतिकता को स्वीकार करते हैं। किंतु आधुनिक लैंगिक अध्ययन की दृष्टि से यह भी देखा जाना चाहिए कि स्त्री को अनेक स्थानों पर स्वतंत्र सामाजिक व्यक्तित्व के रूप में कम और पारिवारिक/कामनात्मक संदर्भ में अधिक प्रस्तुत किया गया है। इसलिए नीतिशतक की स्त्री-दृष्टि को उसके ऐतिहासिक संदर्भ में समझना आवश्यक है: उसे सीधे आधुनिक लैंगिक समानता के मानदंडों के समकक्ष रखना उचित नहीं होगा।

12. मित्रता की अवधारणा

नीतिशतक की सामाजिक चिंतन-परंपरा में मित्रता एक गहरे नैतिक संबंध के रूप में उभरती है।

पापान्निवारयति योजयते हिताय

गुह्यं निगूहति गुणान् प्रकटीकरोति।

आपद्रुतं च न जहाति ददाति काले

सन्मित्रलक्षणमिदं निगदन्ति सन्तः॥

सच्चा मित्र वह है जो व्यक्ति को बुराई से रोकता है, हितकारी कार्य की ओर ले जाता है, रहस्य की रक्षा करता है, गुणों को प्रकट करता है और संकट में साथ नहीं छोड़ता।

यह मित्रता का अत्यंत विकसित सामाजिक सिद्धांत है। इसमें मित्रता मनोरंजन या व्यक्तिगत लगाव नहीं, बल्कि नैतिक उत्तरदायित्व है।

इस दृष्टि से नीतिशतक सामाजिक पूँजी के निर्माण में विश्वास, उत्तरदायित्व और पारस्परिक सहयोग को आवश्यक मानता है।

13. सत्संगति और सामाजिक वातावरण

भर्तृहरि के सामाजिक चिंतन में व्यक्ति का निर्माण उसके संपर्क से होता है।

प्रायेणाधममध्यमोत्तमगुणः संसर्गतो जायते॥

संगति व्यक्ति के गुणों को बदलती है। यह विचार आधुनिक समाजीकरण सिद्धांत से तुलनात्मक अध्ययन की संभावनाएँ खोलता है। बच्चे, विद्यार्थी, नागरिक अथवा नेतृत्वकर्ता—सभी अपने सामाजिक वातावरण से प्रभावित होते हैं। इस संदर्भ में नीतिशतक का विचार है कि श्रेष्ठ व्यक्तियों की संगति व्यक्ति को उन्नत करती है और दुष्ट संगति उसके पतन का कारण बनती है।

इस प्रकार संस्कृति केवल विरासत में प्राप्त व्यवस्था नहीं है; वह सामाजिक संपर्क से पुनर्निर्मित होती रहती है।

14. परोपकार और लोकमंगल

नीतिशतक के सांस्कृतिक चिंतन का सर्वाधिक ऊँचा आयाम परोपकार है।

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः

नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः।

अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः

स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥

फलयुक्त वृक्षों और वर्षा से भरे बादलों के माध्यम से यह बताया गया है कि समृद्धि व्यक्ति को अहंकारी नहीं बल्कि विनम्र बनाए—यही सज्जनता का स्वभाव है।

एक अन्य श्लोक में—

ते एते सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थ परित्यज्य ये।

परोपकार के विभिन्न स्तरों का वर्गीकरण किया गया है। इस वर्गीकरण में आदर्श व्यक्ति वह है जो अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर दूसरों के हित के लिए सक्रिय रहता है।

यह भारतीय सांस्कृतिक अवधारणा “बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय” जैसी व्यापक लोकमंगल-परंपरा से संवाद स्थापित करती है।

15. आत्मसम्मान और व्यक्तित्व की गरिमा

नीतिशतक के नैतिक चिंतन की महत्वपूर्ण विशेषता आत्मसम्मान है।

सिंह और कुत्ते के रूपक के माध्यम से भर्तृहरि बताते हैं कि संकट में भी महान व्यक्ति अपनी गरिमा का परित्याग नहीं करता। इसी प्रकार—

पातितोऽपि कराघातैरुत्पतत्येव कन्दुकः।

प्रायेण साधुवृत्तनामस्थायिन्यो विपत्तयः॥

गेंद के भूमि पर गिरने के बाद पुनः ऊपर उठने का दृष्टांत मनुष्य को विपत्ति में भी संघर्षशील बने रहने की प्रेरणा देता है।

यहाँ आत्मसम्मान और धैर्य व्यक्तिगत गुण भर नहीं हैं; वे सामाजिक प्रतिरोध की शक्ति बन जाते हैं।

16. श्रम, उद्यम और कर्मशीलता

नीतिशतक भाग्यवाद की चर्चा करता है, लेकिन उसे पूर्ण निष्क्रियता का आधार नहीं बनाता। इसके विपरीत स्पष्ट रूप से कहा गया है—

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः।

नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कुर्वाणो नावसीदति॥

आलस्य को मनुष्य का आंतरिक शत्रु तथा उद्यम को श्रेष्ठ मित्र बताया गया है।

श्लोक 90 में—

कर्मायत्तं फलं पुंसां बुद्धिः कर्मानुसारिणी।

तथापि सुधिया भाव्यं सुविचार्यैव कुर्वता॥

कर्म और फल के संबंध को स्वीकार करते हुए विचारपूर्वक कार्य करने पर बल दिया गया है।

यहाँ कर्मवाद और विवेक का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भर्तृहरि की नीति-दृष्टि व्यक्ति को परिस्थितियों का दास नहीं बनाती, बल्कि उसे कर्म और विवेक के माध्यम से अपनी स्थिति सुधारने के लिए प्रेरित करती है।

17. नैतिकता की सामाजिक भूमिका

नीतिशतक में नैतिकता केवल धार्मिक आदेश नहीं है। वह सामाजिक जीवन के संचालन की आवश्यक शर्त है।

श्लोक 83 में कहा गया है—

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्यस्य वाक्संयमो

ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो वित्तस्य पात्रे व्ययः।

अक्रोधस्तपसः क्षमा प्रभवितुर्धर्मस्य निर्व्याजता

सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणम्॥

यहाँ शील को सभी गुणों का मूल माना गया है।

धन का वास्तविक सौंदर्य उचित स्थान पर उसका व्यय है, ज्ञान का सौंदर्य विनम्रता है, शक्ति का सौंदर्य संयम है और तप का सौंदर्य क्षमा है। इससे स्पष्ट है कि कोई भी शक्ति या उपलब्धि नैतिक अनुशासन के बिना अधूरी है।

18. संस्कृति की अवधारणा

नीतिशतक में संस्कृति को केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं रखा गया है। इसकी सांस्कृतिक दृष्टि में—

- गुरु के प्रति विनय,
- विद्वानों का सम्मान,
- सत्य,
- दया,
- दान,
- संयम,
- परोपकार,
- लोकापवाद का विवेक,
- मित्रता,
- परिवार के प्रति उत्तरदायित्व,
- शील,
- तप तथा
- आत्मसंयम

जैसे तत्व सम्मिलित हैं।

विशेष रूप से श्लोक 26 में सत्य, परधन से संयम, गुरु के प्रति विनय और सर्वभूतों के प्रति करुणा को श्रेष्ठ आचरण का मार्ग बताया गया है।

इस प्रकार नीतिशतक की संस्कृति मूलतः मूल्य-आधारित संस्कृति है।

19. लोक और अभिजन के बीच संबंध

नीतिशतक का सामाजिक संसार केवल राजा और विद्वान तक सीमित नहीं है। इसमें किसान, व्यापारी, धनिक, निर्धन, सेवक, मूर्ख, विद्वान, सज्जन, दुर्जन और शासक जैसे अनेक सामाजिक प्रकार उपस्थित हैं।

श्लोक 101-102 में कृषि, व्यापार, सेवा और विभिन्न कलाओं के अध्ययन का उल्लेख मिलता है—

वाणिज्यं कृषिसेवने च सकला विद्याः कलाः शिक्षताम्।

यहाँ आर्थिक क्रिया और कौशल को जीवन के उपयोगी क्षेत्रों में स्थान दिया गया है। इससे स्पष्ट है कि नीतिशतक का दृष्टिकोण केवल आध्यात्मिक मुक्ति तक सीमित नहीं है; वह सांसारिक कर्म और सामाजिक उत्पादन के महत्त्व को भी स्वीकार करता है।

20. सामाजिक विसंगतियों की आलोचना

नीतिशतक का एक महत्वपूर्ण गुण उसका व्यंग्यात्मक और आलोचनात्मक स्वर है। मूर्खता, चापलूसी, दुष्टता, धन के अहंकार, अयोग्य नेतृत्व, गलत मित्रता और सामाजिक पाखंड पर तीखी टिप्पणी मिलती है।

श्लोक 15 में अयोग्य शासक की आलोचना की गई है जो अपने राज्य में विद्वानों को निर्धन बना देता है।

इसी प्रकार—

दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्यालङ्कृतोऽपि सन्।

मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः॥

यह शिक्षा देती है कि ज्ञान का बाहरी आवरण यदि चरित्रहीनता से जुड़ा हो तो वह व्यक्ति को विश्वसनीय नहीं बना सकता।

यह विचार आज के पेशेवर और सार्वजनिक जीवन में भी महत्वपूर्ण है, जहाँ योग्यता और नैतिकता के संबंध को लेकर निरंतर प्रश्न उठते हैं।

21. नीतिशतक की सामाजिक दृष्टि में अंतर्विरोध

पीएच.डी. स्तर के अध्ययन में केवल सकारात्मक मूल्यों की सूची बनाना पर्याप्त नहीं है। नीतिशतक के अंतर्विरोध भी उसके सामाजिक स्वरूप को समझने में सहायक हैं।

पहला अंतर्विरोध गुण और धन के बीच है। एक श्लोक गुण को जाति और कुल से ऊपर रखता है, जबकि दूसरा धन को कुलीनता और विद्वता की सामाजिक पहचान का आधार बताता है।

दूसरा अंतर्विरोध कर्म और भाग्य के बीच है। कुछ श्लोक कर्मशीलता को सर्वोच्च महत्त्व देते हैं, जबकि अन्य में दैव और पूर्वकर्म की शक्ति स्वीकार की गई है।

तीसरा अंतर्विरोध आदर्श नैतिकता और सामाजिक यथार्थ के बीच है। आदर्श रूप में शील, दया, दान और परोपकार की प्रशंसा होती है, लेकिन दूसरी ओर सत्ता, धन, दरबारी संस्कृति और सामाजिक असमानताओं का यथार्थ भी सामने आता है।

यही अंतर्विरोध कृति को ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय दृष्टि से अधिक विश्वसनीय बनाते हैं।

22. आधुनिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

नीतिशतक का आधुनिक महत्त्व उसके शाब्दिक अनुकरण में नहीं, बल्कि उसके मूल नैतिक सिद्धांतों के पुनर्पाठ में है।

22.1 शिक्षा के क्षेत्र में

विद्या को धन, प्रतिष्ठा और व्यक्तित्व के वास्तविक आधार के रूप में स्वीकार करना आज भी प्रासंगिक है।

22.2 प्रशासन में

राजा द्वारा प्रजा के पोषण की अवधारणा उत्तरदायी शासन तथा लोककल्याण की दिशा में नैतिक आधार प्रस्तुत करती है।

22.3 सामाजिक संबंधों में

सच्ची मित्रता को संकट में सहयोग, बुराई से रोकने और हितकारी मार्ग दिखाने से जोड़ना वर्तमान सामाजिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण है।

22.4 आर्थिक जीवन में

धन के दान, सदुपयोग और सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत आधुनिक सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा से संवाद स्थापित करता है।

22.5 व्यक्तिगत विकास में

आलस्य-विरोध, उद्यम, आत्मसंयम, धैर्य और आत्मसम्मान आधुनिक व्यक्तित्व-विकास के मूलभूत तत्व हैं।

22.6 सामाजिक नैतिकता में

शील, विनय, सत्य और करुणा को जीवन-मूल्यों के रूप में प्रतिष्ठित करना आज के तनावपूर्ण और प्रतिस्पर्धी सामाजिक परिवेश में विशेष प्रासंगिकता रखता है।

23. प्रमुख निष्कर्ष

अध्ययन के आधार पर निम्न निष्कर्ष सामने आते हैं—

प्रथम, नीतिशतक मूलतः व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों का नैतिक पाठ है।

द्वितीय, इसमें विद्या को सामाजिक प्रतिष्ठा और व्यक्तित्व निर्माण की केंद्रीय शक्ति माना गया है।

तृतीय, कृति सामाजिक प्रतिष्ठा के संदर्भ में गुण और धन दोनों की वास्तविकता स्वीकार करती है; यही कारण है कि इसमें आदर्शवादी तथा यथार्थवादी दोनों स्वर उपस्थित हैं।

चतुर्थ, राजधर्म के संदर्भ में प्रजापालन और लोककल्याण को शासन की सफलता का महत्वपूर्ण आधार माना गया है।

पंचम, परिवार और मित्रता को सामाजिक स्थिरता के प्रमुख आधार के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ, परोपकार नीतिशतक की सांस्कृतिक चेतना का उच्चतम मूल्य है।

सप्तम, आत्मसम्मान, धैर्य, उद्यम और कर्मशीलता व्यक्ति को संकट के बीच भी सक्रिय बनाए रखने वाले मूल्यों के रूप में स्थापित किए गए हैं।

अष्टम, स्त्री संबंधी दृष्टि में तत्कालीन पारिवारिक और पितृसत्तात्मक मूल्यों की छाप दिखाई देती है; अतः इसका आधुनिक पुनर्पाठ आलोचनात्मक दृष्टि से किया जाना चाहिए।

नवम, नीतिशतक में सामाजिक आलोचना की पर्याप्त शक्ति है। मूर्खता, दुराचार, दुरनीति, चापलूसी और धनाधारित प्रतिष्ठा पर इसकी टिप्पणियाँ सामाजिक यथार्थ की गहरी समझ का प्रमाण हैं।

दशम, नीतिशतक को केवल नीति-उपदेशों का संग्रह मानना अपर्याप्त है। यह सामाजिक व्यवहार, सांस्कृतिक आदर्श और मानवीय स्वभाव के अंतर्संबंधों का काव्यात्मक दस्तावेज है।

24. निष्कर्ष

भर्तृहरि का नीतिशतक भारतीय साहित्यिक परंपरा में ऐसा ग्रंथ है जिसमें जीवन-दर्शन, सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक मूल्यों का सघन समन्वय दिखाई देता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह मनुष्य को केवल धार्मिक या आध्यात्मिक प्राणी के रूप में नहीं देखता, बल्कि उसे सामाजिक संबंधों से निर्मित व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है।

ग्रंथ में विद्या को वास्तविक संपदा, शील को सर्वोच्च भूषण, सत्संगति को व्यक्तित्व निर्माण का साधन, परोपकार को सज्जनता का स्वभाव, मित्रता को नैतिक उत्तरदायित्व, उद्यम को सफलता का साधन और राजधर्म को प्रजापालन से जोड़ा गया है। इस दृष्टि से नीतिशतक में ऐसी मूल्य-दृष्टि विकसित होती है जो व्यक्ति के नैतिक उत्थान को सामाजिक कल्याण से जोड़ती है।

साथ ही, इसका आलोचनात्मक अध्ययन यह भी बताता है कि ग्रंथ अपने ऐतिहासिक युग की सामाजिक सीमाओं से पूरी तरह मुक्त नहीं है। धन और सामाजिक प्रतिष्ठा के बीच संबंध, परिवार में स्त्री की पारंपरिक भूमिका तथा सामाजिक पदानुक्रम के संकेत यह स्पष्ट करते हैं कि नीतिशतक को आधुनिक समानतावादी समाज की संपूर्ण रूपरेखा के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता। बल्कि इसे ऐतिहासिक समाज की अंतर्विरोधपूर्ण चेतना के रूप में समझना अधिक वैज्ञानिक होगा।

इस प्रकार नीतिशतक का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन हमें यह निष्कर्ष देता है कि इसकी स्थायी शक्ति किसी एक उपदेश में नहीं, बल्कि मानवीय व्यवहार के सूक्ष्म निरीक्षण, सामाजिक विसंगतियों की पहचान और नैतिक जीवन के लिए मूल्य-आधारित दिशा प्रदान करने की क्षमता में निहित है। यही कारण है कि लगभग निरंतर बदलती सामाजिक परिस्थितियों के बावजूद इसके अनेक नैतिक सूत्र आज भी विमर्श योग्य बने हुए हैं।

संदर्भ सूची

1. भर्तृहरि। (1965)। नीतिशतकम् : 'ललिता' एवं 'बाला' संस्कृत-हिन्दी व्याख्योपेतम्। चौखम्भा संस्कृत सीरीज कार्यालय। इस संस्करण का ग्रंथ-संबंधी अभिलेख पुस्तकालयीय सूची में उपलब्ध है। [Cinii](#)
2. भर्तृहरि। (2023)। द नीतिशतक एंड वैराग्यशतक ऑफ भर्तृहरि (एम. आर. काले, संपादक एवं व्याख्याकार; 7वाँ संस्करण)। मोतीलाल बनारसीदास। पुस्तकालयीय विवरण में इसके सातवें संस्करण तथा 2023 के प्रकाशन की सूचना उपलब्ध है। [Sanskrit Library](#)
3. भर्तृहरि। (1914)। द नीतिशतक, शृंगारशतक एंड वैराग्यशतक (पं. गोपीनाथ पुरोहित, संपादक एवं व्याख्याकार)। श्री वेंकटेश्वर प्रेस। [Google Books](#)
4. तेलंग, के. टी. (संपा.)। (1874)। द नीतिशतक एंड वैराग्यशतक ऑफ भर्तृहरि : विद एक्सट्रैक्ट्स फ्रॉम दू संस्कृत कॉमेंट्रीज़। गवर्नमेंट सेंट्रल बुक डिपो। यह ग्रंथ बॉम्बे संस्कृत सीरीज के ग्यारहवें अंक के रूप में प्रकाशित हुआ था। [BnF Catalogue](#)
5. टॉनी, सी. एच. (1875)। ए ट्रांसलेशन ऑफ द नीतिशतकम्, ऑर हंड्रेड वर्सेज ऑन एथिक्स एंड पॉलिटिक्स, बाय भर्तृहरि। द इंडियन एंटीक्वेरी, 4. [Wikisource](#)
6. मिलर, बार्बरा स्टोलर। (1967)। भर्तृहरि : पोएम्स—सतकत्रय का लिप्यंतरित संस्कृत पाठ एवं अनुवाद। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस। पुस्तक का प्रथम प्रकाशन न्यूयॉर्क में 1967 में दर्ज है। [Open Library](#)
7. कोसांबी, डी. डी. (1945)। द सतकत्रयम् ऑफ भर्तृहरि। आनन्दाश्रम संस्कृत सीरीज।
8. कोसांबी, डी. डी. (1959)। भर्तृहरि का सतकत्रयम् : प्राचीनतम टीका एवं विभिन्न पांडुलिपियों के पाठांतर सहित। भारतीय विद्या भवन।
9. संस्कृत डॉक्यूमेंट्स। नीतिशतकम् भर्तृहरिकृतम्। संस्कृत मूल पाठ। उपलब्ध पाठ में नीतिशतक के श्लोकों का देवनागरी रूप प्रस्तुत किया गया है।